धरती के अन्दर, सूरज के पार

स्मिति

लाइब्रेरी पीरियड के लिए बच्चे कक्षा से बाहर आकर बैठ गए हैं। यह जगह खुली हुई है, और पढ़ने-पढ़ाने के लिए कक्षा से अधिक उपयुक्त लगती है। एक कोने में रस्सी बँधी हुई है, जिस पर बहुत सारी किताबें टँगी हैं। बच्चे दरी पर बैठे हैं। संगीताजी भी बच्चों के साथ नीचे ही बैठ गईं। वे विद्या भवन द्वारा चलाए जा रहे शैक्षिक कार्यक्रम की तरफ से स्रोत व्यक्ति हैं और इस कार्यक्रम से जुड़े स्कूलों में कक्षा 6, 7 और 8 के बच्चों के साथ पुस्तकालय से सम्बन्धित गतिविधियाँ करती हैं। अनिलजी जो इस कार्यक्रम में फील्ड सँभालते हैं, बताते हैं कि जगह कम होने की वजह से कक्षा में पुस्तक वितरण और गतिविधियाँ ठीक से नहीं हो पातीं, इसलिए वे बच्चों को बाहर ले आते हैं।

बच्चों के साथ कविता-कहानी पाठ

बच्चे व्यवस्थित ढंग से बैठे थे। कुछ हमें कौतूहल से देख रहे थे, कुछ आपस में फुसफुसा रहे थे। कक्षा-7 के बच्चों से संगीताजी ने पूछा कि क्या उनमें से किसी के घर के लोग खेती करते हैं या कुछ उगाते हैं। कुछ बच्चों ने 'हाँ' बोला, तो वे उनसे उस सम्बन्ध में और भी प्रश्न पूछने लगीं। एक बच्चे ने बताया कि उसके यहाँ गाजर उगाते हैं, तो वे उस बच्चे

से गाजर निकालने की प्रक्रिया के बारे में पूछने लगीं। इसके उपरान्त उन्होंने बच्चों से पूछा कि क्या वे एक बाल-गीत सुनना चाहेंगे? बच्चों ने ज़ोर-से 'हाँ' बोला तो उन्होंने सबसे गोला बनाकर खड़े होने के लिए कहा। कविता एक बुढ़िया के गाजर खोदने के मज़ेदार प्रयासों के बारे में थी। संगीताजी हाथों से अभिनय करती जा रही थीं और बच्चे उसे मज़े से दोहरा रहे थे। कविता खत्म होते-होते ज़्यादातर बच्चे हँसने लगे थे।

अब संगीताजी ने बच्चों के साथ एक कहानी 'अड़ियल गधा' के शीर्षक पर बात शुरू की, और उनसे 'अड़ियल' शब्द का अर्थ पूछा। बच्चे एक बार में सटीक उत्तर नहीं दे पाए, पर थोड़ी बातचीत के बाद अर्थ तक पहुँच गए। उन्होंने पुस्तक का कवर बच्चों को दिखाया और पूछा कि वे क्या देख पा रहे हैं। फिर उस कहानी में क्या हो सकता है, इस पर संक्षेप में बात करने के बाद वे बच्चों को किताब दिखाकर कहानी सुनाने लगीं। संगीताजी को कहानी याद थी, इसलिए वे कहानी सुनाते हुए किताब का मुँह बच्चों की ओर रखे हुई थीं, और बीच-बीच में प्रश्न भी पूछती जा रही थीं। वे थोड़ी और बातचीत करना चाहती थीं, पर इतने में पीरियड खत्म हो गया।

फिर कक्षा-8 के बच्चे आकर बैठ गए। उन्होंने कहा कि वे भूत की कहानी सुनेंगे। संगीताजी ने उन्हें एक कहानी सुनाई, जिसमें एक व्यक्ति रात में छत पर टँगे कुर्ते को भूत समझ उस पर गोलियाँ दाग देता है। कहानी सुनाने के बाद उन्होंने बच्चों से भूत से जुड़ी उनकी अवधारणाओं और अनुभवों के बारे में प्रश्न किए और उन प्रश्नों के जवाब में आई किसी भी बात को तिरस्कृत या नकारा नहीं बल्कि बच्चों से इस बारे में और सोचने एवं पढ़ने के लिए कहा।

क्या हो पाठ्यपुस्तकों की भूमिका?

बातचीत के दौरान उन्होंने बच्चों से पूछा, "सूरज पृथ्वी के चक्कर लगाता है या पृथ्वी सूरज के?" बच्चे कहते हैं, "सूरज पृथ्वी के।" उन्होंने फिर पूछा, "हम पृथ्वी पर रहते हैं या पृथ्वी में?" कुछ बच्चे कहते हैं, "पृथ्वी में।" फिर मैंने बच्चों से पूछा, "अगर सूर्य पृथ्वी के चक्कर लगाता है तो चन्द्रमा कहाँ होता है?" वे कहते हैं, "आसमान में।" एक बच्ची कहती है कि "चन्द्रमा सारे समय आकाश में ही होता है, दिखता बस रात में है।" बच्चे उसकी कही बात के बारे में सोचते हुए बताते हैं, "हाँ, कभी-कभी दिन में भी दिखता है।" संगीताजी बच्चों के जवाब सुनकर और सवाल पूछती जा रही थीं और उन्हें बता रही थीं कि इन सब प्रश्नों के जवाब उन्हें पुस्तकों में मिल सकते हैं। उन्होंने इस ओर संकेत ज़रूर किया कि बच्चे अपनी

बनाई हुई अवधारणाओं के बारे में पढ़ और पूछकर संशोधन कर सकते हैं, पर उनकी समझ को नकारकर, वे उन्हें बिलकुल भी हीन महसूस नहीं करा रही थीं।

मैं पीछे बैठकर यह सब देख-सुन रही थी, और याद करने की कोशिश कर रही थी कि कितनी बार यह कहा जाता है कि इधर-उधर की किताबें न पढ़कर सिर्फ कोर्स की किताबें पढ़नी चाहिए। लेकिन बच्चों के कोर्स की किताबों में तो सौरमण्डल के बारे में बताया जा चुका है। क्या बच्चों की उत्सुकता को उनकी कोर्स की किताबें टटोल पा रही हैं? बच्चों को मुक्त चिन्तन के लिए, और पढ़ने के लिए प्रेरित कर पा रही हैं?

अच्छे पुस्तकालय-संचालक का रोल

मैं लाइब्रेरी की अवधारणा के बारे में भी सोच रही थी। हम पुस्तकालय को किताबों से भरे एक कमरे के रूप में कल्पित करने के आदि हैं जहाँ बातचीत करना मना होता है। पर मुझे पुस्तकालय का यह रूप, जहाँ बच्चे और किताबें, दोनों खुले में हैं, ज़्यादा सहज और प्रभावी लग रहा है। बच्चे यहाँ किताबों को देखने-सुनने के बाद उनके बारे में बात कर पा रहे थे। मैं लाइब्रेरी में एक अच्छे संचालक की भूमिका के बारे में भी सोच रही थी। संगीताजी जैसी गतिविधियाँ कर रही थीं, वैसी गतिविधियाँ मैंने अपने स्कूली जीवन में लाइब्रेरी पीरियड में कभी देखी ही नहीं। पर यह ज़रूर कह सकती हूँ, वैसा होता तो मुझे बेहद अच्छा लगता। यहाँ उपलब्ध किताबें भी लाइब्रेरी में दिखने वाली आम किताबों से ज़रा अलग थीं।

यहाँ मौजूद चित्र-पुस्तकें ज़्यादा न पढ़ पाने वाले पाठकों में कौतूहल पैदा करने वाली हैं और समझ का

सारा भार शब्दों पर न डालने की वजह से नन्हे पाठकों के लिए अधिक ग्राह्य लगती हैं। संगीताजी बहुत कुशलता से हर कहानी का सन्दर्भ (कॉन्टेक्स्ट) भी बनाती चल रही थीं, जो बच्चों के अपने परिवेश से जुड़ता है। बहुधा हम एक सन्दर्भ से दूसरे सन्दर्भ तक पहुँचने में अच्छे पुस्तकालयों और उससे भी ज़्यादा शुरुआती दौर में अच्छे संचालकों का महत्व भूल जाते हैं। आम तौर पर हम मान लेते हैं कि बच्चों को किताबें बोझिल लगती हैं, पर हम यह नहीं स्वीकार करना चाहते कि हमने बच्चों के लिए रोचक किताबें ढूँढने की मेहनत ही नहीं की। यह मेहनत कुछ स्कूलों में होती दिखती है, तो थोड़ा सम्बल बँधता है। यह आशा बनी रहती है कि बच्चे किताबों से खोजकर वह ज्ञान शामिल कर लेंगे जिसको पाना कई सालों की बोझिल उबाऊ स्कूली शिक्षा उनके लिए सम्भव नहीं कर सकी। और वे आने वाली पीढ़ियों को कहानियाँ सुनाते हुए पूछ सकेंगे कि हम धरती के भीतर रहते हैं या बाहर, और अगर धरती वाकई घूम रही है तो हम चक्कर खाकर गिर क्यों नहीं जाते?

यांत्रिक बनाम सजीव शिक्षण

एक अन्य स्कूल की छठी कक्षा में संगीताजी 'पहाड़ी पर पेड़ था' कविता सुना रही थीं। इस कविता में हर बार एक नई पंक्ति जुड़ती जा रही थी और हर बार पिछली सब पंक्तियाँ दोहराई जाती थीं। कविता का विषय बड़ा सरल था, इसलिए बच्चे क्रमानुसार कविता याद रख पा रहे थे। यहाँ किसी पर भी शुद्ध या साफ बोलने का दबाव नहीं था, इसलिए सब बच्चे कविता पाठ में हिस्सा ले रहे थे और मूल पंक्ति आने पर उत्साहित होकर ज़ोर-से बोल रहे थे। बच्चे घेरा बनाकर खड़े हो गए और खुश दिख रहे थे। इस तरह की गतिविधियों में हिस्सा लेना मुझे निजी तौर पर असहज करता है, पर उस दिन मैं भी उस हिचकिचाहट का कुछ हिस्सा अलग रख, इस सजीव कविता पाठ का हिस्सा बन गई थी।

इसके बाद संगीताजी ने बच्चों को एक कहानी सुनाई जिसे बच्चों ने चाव से सुना। अगले दिन उच्च माध्यमिक विद्यालय में बच्चों से बातचीत करते हुए संगीताजी उनकी भाषा (मेवाड़ी) में बिल्ली, बकरी, भेड़ आदि के नाम एवं उनके बच्चों के नाम पूछ रही थीं और उन्हें बोर्ड पर लिखती जा रही थीं। बच्चे बीच-बीच में हँसते जा रहे थे।

इससे पहले बच्चे बोर्ड पर लिखे दीपावली के निबन्ध को कॉपी में उतार रहे थे। मैंने बगल में बैठी सोनल की कॉपी मांगकर देखी तो पाया कि निबन्ध साफ-सुथरे तरीके से लिखा हुआ है। लेकिन बोर्ड पर लिखा हुआ देखकर उतारने पर भी उसने बहुत-से शब्दों की वर्तनी बोर्ड से भिन्न

लिखी है, ह्रस्व और दीर्घ मात्राओं में कई जगह अन्तर था। इससे यह पता चलता है कि इस तरह का यांत्रिक शिक्षण बच्चे को सजग होकर अध्ययन की प्रक्रिया में शामिल नहीं करता है, बच्चे अपने ही लिखे हुए को ध्यान देकर पढ़ने या समझने के लिए लालायित नहीं हो पाते।

इसके बाद बातचीत में यह सवाल पूछा जाता है कि क्या कुत्ता एवं बिल्ली या बिल्ली और चूज़ा दोस्त हो सकते हैं? कुछ बच्चों ने 'हाँ' कहा तो कुछ ने मना किया। एक बच्ची ने बताया कि उसके घर में चिड़िया, बिल्ली और कुत्ता, तीनों हैं और वे एक-दूसरे से लड़ते नहीं हैं। फिर संगीताजी ने बच्चों को एक किताब दिखाई जिसके कवर पर एक चूज़ा और बिल्ली थे, कहानी का शीर्षक था 'नन्हे चूज़े की दोस्त'। बच्चे कहानी के सन्दर्भ को कक्षा में हुई बातचीत से जोड़ पा रहे थे और खुश दिख रहे थे।

मेरे दो दिन की स्कूल विज़िट का आखिरी पड़ाव शैक्षणिक संवर्धन कार्यक्रम के अन्तर्गत आने वाले स्कूलों में सबसे दूर स्थित रोबा माध्यमिक विद्यालय था। मुझे नहीं पता था कि दूर-दराज़ का यह स्कूल मुझे सबसे ज़्यादा प्रभावित करेगा। यहाँ संगीताजी कविताएँ सुना रही थीं और साथ ही वे एकॉर्डियन चित्र-पुस्तकें भी बच्चों को दिखा रही थीं जिनमें ये कविताएँ लिखी हैं। ये पुस्तकें हम अपने साथ लेकर गए थे जो बच्चे बहुत चाव से देख रहे थे। यदि कोई बच्चा ज़्यादा उलट-पलट करता तो बच्चों में से ही कोई उसे

टोकता कि “देखो, फाड़ मत देना।” संगीताजी ने बच्चों को एक पंक्ति देकर कहा कि “अब आगे की कहानी में हर बच्चा एक पंक्ति जोड़ेगा।” कहानी बढ़ती जा रही थी और कुछ ही मिनटों में बच्चों ने अपनी ही एक कहानी गढ़ डाली।

यहाँ शिक्षकों की कमी है, इसलिए कक्षा 6 और 7 के बच्चे एक-साथ बैठते हैं। विद्याभवन के कार्यक्रम की ओर से आने वाले हेमराज बच्चों के बीच लोकप्रिय हैं और बड़ी कक्षाओं के बच्चे भी चाहते हैं कि वे उनकी कक्षा में आया करें। हेमराज यथासम्भव ऐसा करने की कोशिश करते हैं, पर बहुधा ऐसा नहीं हो पाता है। यहाँ से उठकर संगीताजी आठवीं कक्षा में चली गईं। कुछ देर बाद जब हम पहले वाली कक्षा में लौटे तो पाया कि हेमराज के कहने पर बच्चों ने अपनी बनाई हुई कहानी स्मृति के सहारे अपनी कॉपियों में साफ-सुन्दर शब्दों में नोट कर ली है। मैं बच्चों की कॉपियाँ देखकर बहुत हैरान हुई। मुझे नहीं लगता कि उनकी उम्र में मैं इतना लम्बा गद्य, जो सिर्फ सुना हो, जिसका कोई चित्र भी न देखा हो, उसे इतनी स्पष्टता से कागज़ पर लिख सकती थी। मैं इसलिए भी आश्चर्यचकित थी क्योंकि पिछले दिनों में देखे गए अधिकतर स्कूलों में बच्चे लिखने-पढ़ने में अभी इतने दक्ष नहीं हुए थे। उसके बहुत-से कारण थे। मैंने स्कूल की प्राइमरी शिक्षा के बारे में पूछा तो पता चलता कि यहाँ पर्याप्त संख्या में शिक्षक नहीं हैं और इसलिए बहुत बार शिक्षकों की जगह बड़ी कक्षाओं के बच्चे छोटी कक्षाओं के बच्चों की सहायता करते हैं। प्रिंसिपल खुद अधिकांश समय कक्षाओं में पढ़ा रही होती हैं। कोई भी बाहरी मदद स्कूल को मिलती है तो प्रिंसिपल और शिक्षक सहर्ष उसका स्वागत करते हैं।

छोटी चीज़ें बड़े अन्तर पैदा करती दिखीं, और मुझे एहसास हुआ कि जैसे लाइब्रेरी में अच्छे संचालक होने से बहुत कुछ बेहतर हो सकता है, वैसे ही प्रतिबद्ध शिक्षकों के होने से बहुत-सी मुश्किलों से पार पाया जा सकता है।

स्मिति: जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय से भाषा विज्ञान में पीएच.डी. कर रही हैं। शिक्षा, शिक्षा की भाषा, और बहुभाषीय शिक्षण जैसे विषयों में खास रुचि है। बच्चों की भाषा, स्कूल में उनके सन्दर्भों के लिए जगह, कक्षा में एकाधिक भाषाओं की सम्भावना, आदि के बारे में बहुत कुछ जानना और समझना चाहती हैं।

यह लेख विद्या भवन एजुकेशन रिसोर्स सेंटर द्वारा संचालित परियोजना ‘शिक्षा सम्बल कार्यक्रम’ के अनुभव के आधार पर लिखा गया है।

सभी फोटो: स्मिति।